Volume-08
Issue-12
December-2021

ISSN: 2349-7637 (Online)
RESEARCH HUB International Multidisciplinary Research Journal
https://rhimrj.co.in/ [Peer-Reviewed Journal]
https://doi.org/10.53573/rhimrj.2021.v08i12.001

'एका आंदोलन', अवध में किसान आंदोलनों में 'भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस' की भूमिका

वंशिका शुक्ला

Student Law, Babasaheb Bhimrao Ambedkar University, Lucknow

ARTICLE DETAILS

Article History
Published Online: 15 December 2021

Keywords
किसान आंदोलन, किसान आंदोलन और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस, गांधी जी एवं किसान आंदोलन, किसान आंदोलनों के कारण एवं विचारधारा

Corresponding Author
Email: vanshikashukla1234@gmail.com

ABSTRACT

*आमतौर पर यह माना जाता है कि भारतीय समाज में समय–समय पर होने वाली उथल–पुथल में किसानों की कोई सार्थक भूमिका नहीं रही है, लेकिन ऐसा नहीं है क्योंकि भारत के स्वाधीनता आंदोलन में जिन लोगों ने शीर्ष स्तर पर अपनी उपस्थिति दर्ज कराई, उनमें आदिवासियों, जनजातियों और किसानों का अहम योगदान रहा है। होमरूल लीग के कार्यकताओं के प्रयास तथा मदन मोहन मालवीय के दिशा निर्देशों के परिणामस्वरूप फरवरी, सन् 1918 में उत्तर प्रदेश में **'किसान सभा'** का गठन किया गया। सन् 1919 के अंतिम दिनों में किसानों का संगठित विद्रोह खुलकर सामने आया। इस संगठन को जवाहरलाल नेहरू ने अपने सहयोग से शक्ति प्रदान की। उत्तर प्रदेश के हरदोई, बहराइच एवं सीतापुर जिलों में लगान में वृद्धि एवं उपज के रूप में लगान वसूली को लेकर अवध के किसानों ने **'एका आंदोलन'** नामक आंदोलन चलाया।*

प्रस्तावना

अवध क्षेत्र मुगल साम्राज्य का एक बहुत ही महत्वपूर्ण हिस्सा था। अवध 1722 में सादात खाँ के संरक्षण में मुगल साम्राज्य से मुक्त हो गया, और इसका बनारस, गाजीपुर, जौनपुर एवं चुनार तक विस्तार भी हुआ। धीरे–धीरे समय बढता गया और अवध 1856 में ब्रिटिश शासन के अधीन आ गया और इसके साथ ही अवध की शक्तियाँ भी ब्रिटिश शासन के अन्तर्गत आ गयीं। ब्रिटिश सरकार ने उन ताल्लुकदारों और जमीदारों को भूमि वितरित की जो किसानों से उच्च कर लेते थे। जहाँ एक तरफ प्रथम विश्व युद्ध ने किसानों की हालत पहले से ही बिगाड़ रखी थी, सरकार द्वारा कई उच्च कर वसूलने से उनकी स्थिति बहुत ही दयनीय हो गयी। भोजन और अन्य आवश्यक वस्तुओं के दामों में भी लगातार वृद्धि हो रही थी। इस क्षेत्र में अधिकांश किसान या तो कम भूमि वाले थे या फिर बड़े किसानों के खेतों में काम करने वाले।[1] यहाँ पर यह बात गौरतलब है कि इस दौरान गृह शासन आंदोलन बहुत सक्रिय था। 1918 में किसान सभा का गठन भी हुआ। गौरीशंकर मिश्र, इंद्रनारायण द्विवेदी और मदन मोहन मालवीय किसान सभा के प्रमुख नेता थे। 1919 के तुरंत बाद, यूपी में किसान सभा की 450 शाखाएँ बनायी गयीं। और यहाँ के बहुत से किसानों ने 1918 में दिल्ली में आयोजित कांग्रेस के अधिवेशन में भाग भी लिया था। कई स्थानीय नेता जैसे झिंगुरी सिंह, दुर्गपाल सिंह और बाबा रामचंद्र आदि किसान सभा के कारण ही अस्तित्व में आये।

जून 1920 में, बाबा रामचंद्र ने नेहरू जी से गाँव आने और किसान की स्थिति देखने का अनुरोध किया। नेहरू जी ने अपनी आत्मकथा में इलाहाबाद में किसानों के साथ बैठक के बारे में लिखा है कि किसानों ने उन्हें तल्खदारों के बारे में बताया। किसान 1921 से मार्च के बीच अधिक सक्रिय थे, मुख्य रूप से बाबा रामचंद्र के नेतृत्व में रायबरेली, प्रतापगढ़ और सुल्तानपुर जैसे दक्षिण और दक्षिण पूर्व अवध में।[1] कई जमींदारों के घर और फसलों को किसानों ने नष्ट कर दिया। कई व्यापारियों को सस्ते दामों में सामान बेचने के लिए मजबूर होना पड़ा।[2]

1921 के दौरान, यह किसान आंदोलन और असहयोग आंदोलन हाथ से चला गया। उसी समय ब्रिटिश सरकार द्वारा मालगुजारी अधिनियम पारित किया गया, जिसने किसानों को कुछ आशा दी और इस तरह यह आंदोलन हाशिए पर चला गया। लेकिन यह अवध में किसान आंदोलनों का अंत नहीं था। अवध के विभिन्न हिस्सों में एक और किसान आंदोलन शुरू हुआ जिसे 'एका आंदोलन' के रूप में जाना जाता है। यह आंदोलन हरदोई, सीतापुर और बहराइच क्षेत्र में था। यह आंदोलन किसानों की समस्याओं के कारण भी था। यह आंदोलन कांग्रेस नेताओं द्वारा समर्थित नहीं था क्योंकि जो लोग इस आंदोलन के नेता थे, वे अहिंसा के गांधीवादी सिद्धांत पर विश्वास नहीं कर रहे थे। इस आन्दोलन का नेतृत्त्व निम्न जाति समुदाय ने किया जिसे पासी जाति के नाम से जाना जाता है।[3]

---

[1] Mahajan, 2004: pp. 60-65
[2] Mahajan, 2004: p. 785
[3] Chandra, 2011: pp. 174-178

एका आन्दोलन

1857 के विद्रोह के अंत के बाद, ब्रिटिश सरकार ने अवध के किसानों के प्रति बहुत ही प्रवर्ती प्रणाली को अपनाया। जमींदारों को ब्रिटिश सरकार ने जमीनें दी थीं। 1857 में महारानी विक्टोरिया की घोषणा से भारत ब्रिटिश सरकार के अधीन आ गया था। लेकिन इस घोषणा ने भारत के भविष्य को मौका नहीं दिया। इसका प्रभाव अवध के किसानों पर बहुत दमनकारी था। ब्रिटिश सरकार ने वनों की कटाई शुरू कर दी। किसान कृषि के लिए भूमि को उपयुक्त बना रहे थे, लेकिन ब्रिटिश सरकार उस जमीन को जमींदारों को दे देती थी। यह वह समय था जब किसानों को बहुत सारी समस्याओं का सामना करना पड़ रहा था। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने इस दमनकारी नीति के विरूद्ध आंदोलन किया, लेकिन इससे केवल शहरी व्यापारियों और जमींदारों को मदद मिली, परंतु इससे किसानों को मदद नहीं मिली। कांग्रेस के नेता केवल मध्यम वर्ग के लिए बात कर रहे थे। यही वह समय था जब गांधी जी भारतीय राजनीति में आए। उन्होंने किसानों की समस्याओं की ओर अपना ध्यान दिया। गांधी जी ने इसकी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए चंपारण में किसान आंदोलन शुरू किया। गांधी जी द्वारा प्रारम्भ किया गया यह आंदोलन सफल रहा। कांग्रेस ने गांधी जी का स्वागत किया और इसके पश्चात् गांधी जी भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के बहुत महत्वपूर्ण नेता बन गए।

मदारी पासी हरदोई जिले के किसान नेता थे। जब राष्ट्रीय आंदोलन कांग्रेस के नियंत्रण में आ गया और इसने किसानों के मुद्दों को छोड़ दिया, तो कई छोटे किसान नेता अस्तित्व में आए और मदारी पासी उनमें से एक थे। अवध में अलग–अलग नामों से कई किसान आंदोलन हुए। प्रतापगढ़ जिले में, किसान आंदोलन को 'टीसा' नाम से जाना जाता था, जिसके नेता रामचंद्र थे और संडीला और हरदोई जिले में, इसे पासी आंदोलन के नाम से जाना जाता था।[4] एका आन्दोलन भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के एक घटक के रूप में जाना जाता है। उत्तर प्रदेश के हरदोई, बहराइच एवं सीतापुर जिलों में लगान में वृद्धि एवं उपज के रूप में लगान वसूली को लेकर अवध के किसानों ने यह आन्दोलन चलाया था। इस आन्दोलन में कुछ जमींदार भी शामिल थे। इस आन्दोलन के प्रमुख नेता 'मदारी पासी' और 'सहदेव' थे।[5] ये दोनों निम्न जाति के किसान थे।

"एका" की कहानी उस दौर की है जब प्रथम विश्व युद्ध के बाद देश की आजादी की लड़ाई के साथ ही निचले स्तर से मजदूरों, किसानों, ग्रामीण गरीबों, आदिवासियों के प्रतिरोध संघर्ष हर जगह खड़े हो रहे थे। आजादी की लड़ाई का नेतृत्व जहां राष्ट्रीय स्तर पर गांधी, नेहरू आदि के संयोजन में कांग्रेस कर रही थी, वहीं जमीनी स्तर पर उभर रहे मजदूर किसानों के इस प्रतिरोध संघर्ष का नेतृत्व करने वाला न कोई राष्ट्रीय चेहरा दिख रहा था और न ही राष्ट्रीय स्तर पर कोई संगठन, पर देश भर में यह दोनो ही धारा लड़ाई के मैदान में दिख रही थी। दरअसल देश के लोगों के लिए आजादी के मतलब भी अलग–अलग थे। जहां कांग्रेस के नेतृत्व में इस देश के नए उभरते पूंजीपतियों, जोतदारों, जमींदारों और राजे रजवाड़ों का एक बड़ा हिस्सा विदेशी गुलामी से मुक्ति चाहता था और खुद देश का मालिक बनने का सपना देख रहा था, वहीं देश के करोड़ों मजदूरों, किसानों, भूमिहीनों और आदिवासियों के लिए आजादी का मतलब सिर्फ अंग्रेजों से ही आजादी नहीं, बल्कि इन जमींदारों, ताअल्लुकदारों, राजे–रजवाड़ों के शोषण से भी मुक्ति था। देश की आजादी की पूरी लड़ाई में वर्ग हितों की यह टकराहट हमें हर जगह मिलती है।[6]

भारत में किसान आंदोलनों की विचारधारा और प्रकृति

गॉफ के अनुसार, ''जो लोग आदिम साधनों से कृषि या संबंधित उत्पादन में संलिप्त होने के साथ–साथ अपनी उपज का कुछ हिस्सा खुद से जमीदारों अथवा राज्य के एजेंटों को कर के रूप में देते रहे हैं,[7] ऐसे लोगों की किसान आंदोलनों में वर्ग संघर्ष तथा वैचारिक आधार पर एक अलग श्रेणी मानी जाती है।'' मार्क्स ने किसानों को निष्क्रिय बताया जबकि इसके परे लेनिन, माओ और फैनन ने किसान आंदोलनों को क्रांति के केन्द्र के रूप में रखा। भारतीय संदर्भ में किसान आंदोलनों की दो विचारधाराएं थीं– विनोबा भावे का भूदान और जय प्रकाश नारायण का सर्वोदय तथा कम्युनिस्ट। तेभागा, तेलंगाना, नक्सली और भूमि भव्य आदि जैसे किसान आंदोलन कम्यूनिस्ट विचारधारा पर आधरित थे। अगर देखें तो मार्क्सवादी विचारधारा ने सामाजिक आंदोलनों की संकल्पना में महत्वपूर्ण नेतृत्व प्रदान किया।[8] ऐसा प्रायः देखा गया है कि सामाजिक आंदोलन पाँच कारणों से होते हैं जैसे–

1. परिभाषा और वर्गीकरण की समस्याएं
2. आंदोलनों के उद्भव से संबंधित समस्याएं

---

[4] Pandey, 2010: pp. 29-49
[5] Ibid
[6] Ibid
[7] Singh, 2000: p. 93
[8] Rao, 2000: p. xviii

3. विचारधाराओं के निर्माण और पहचान स्थापित करने से संबंधित समस्याएं
4. सामूहिक लामबंदी, संगठन, नेतृत्व, आंतरिक गतिशीलता और पुनः उपयोग की समस्याएं
5. व्यापक समाज और संस्कृति के परिणामों और परिवर्तनों की प्रकृति से संबंधित समस्याएं[9]

ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में यह सर्वविदित है कि किसान आंदोलन सामाजिक परिवर्तन और विकास में बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते रहे हैं।[10]

किसान आंदोलनों के कारण

भारत में किसान आंदोलन मुख्य रूप से औपनिवेशिक शासन के दौरान शुरू हुए जब औपनिवेशिक सरकार ने अधिशेष प्राप्त करने के लिए किसानों का शोषण करना शुरू किया।[11] ऐसा नहीं है कि ये आंदोलन केवल ब्रिटिश काल में हुए थे, ये किसान आंदोलन मुगल काल में भी किसानों के शोषण और मालगुजारी प्रणाली के माध्यम से उच्च कर वसूलने के कारण हुए थे। लेकिन यह औपनिवेशिक काल था, सरकार ने उनकी शक्ति और स्थिरता को बढ़ाने के लिए मालगुजारी और अन्य करों में वृद्धि की। हम स्थानीय राजाओं और नवाबों की सत्ता छीनने के कारण ब्रिटिश शासन की पहली शताब्दी में विद्रोह की एक श्रृंखला देख सकते हैं, और इन शासकों को किसानों का समर्थन प्राप्त था।[12]

1857 के बाद ब्रिटिश सरकार ने सीधे तौर पर किसानों का शोषण करना शुरू कर दिया जो कि शुरुआती दौर में राजाओं के माध्यम से किया जाता था। इस चरण में, औपनिवेशिक सरकार ने किसानों पर उद्योग आधारित कृषि जैसे नील, कपास आदि करने पर जोर दिया। उद्योग आधारित कृषि ने भूमि की उर्वरता को नष्ट कर दिया जिससे फसल उत्पादन कम हो गया। इस स्थिति ने किसान आंदोलनों ने भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। ब्रिटिश सरकार ने भारत की कृषि का व्यवसायीकरण कर दिया। वे किसानों को अग्रिम धन देते थे और बांड के रूप में हस्ताक्षर करवाते थे और उसके बाद वे नील की खेती करने के लिए मजबूर करते थे। 19वीं शताब्दी के मध्य में विदेशी व्यापार सरकार के नियंत्रण में आ गया था। ब्रिटिश कृषि दो आधारों पर आधारित थी–

1. अधिक कर प्राप्त करने की प्रवृत्ति
2. निर्यात के लिए विशेष उत्पादन

सरकार ने कृषि की स्थिति में सुधार करने की कोशिश नहीं की। जॉर्ज ब्लिन द्वारा प्रस्तुत एक कृषि रिपोर्ट में कहा गया है कि 1893 से 1946 के बीच कृषि उत्पादन न केवल रुका बल्कि कम हुआ। 1870 के दशक के बाद, दोआब एक महत्वपूर्ण व्यापार क्षेत्र बन गया और रेलवे, सड़क और नदी मार्गों के निर्माण ने इस क्षेत्र को अनाज निर्यात के लिए एक महत्वपूर्ण अंग बना दिया। 1860 से, नील और गन्ने के उत्पादन से गंगा–यमुना दोआब महत्वपूर्ण नकदी फसल क्षेत्र बन गया था, जो आमतौर पर जमीदारों के स्वामित्व में था।[13] इसके साथ ही जिन क्षेत्रों में जमीदारी व्यवस्था या तो स्थायी या अस्थायी रूप से स्थापित की गई थी वहाँ पर रैयतवाड़ी और महलवारी व्यवस्था ने किसानों की स्थिति को बुरी तरह प्रभावित किया।[14]

अवध 1856 में ब्रिटिश नियंत्रण में आ गया। ब्रिटिश सरकार ने अवध पर उन्हीं नियमों को लागू किया जो तालुकदारों की व्यवस्था ने अवध में भूमि वितरण में बड़ी असमानता पैदा की थी।[15] 1880 के दशक में लखनऊ जिले में केवल आधी आबादी के पास 50 बीघे से अधिक भूमि थी, छह प्रतिशत के पास 20 से 50 बीघे, 11.5 प्रतिशत के पास 10 से 20 बीघा, 15 प्रतिशत के पास 5 से 10 बीघा और 39.5 प्रतिशत के पास 5 बीघे से कम भूमि थी। शेष 27.5 प्रतिशत जनसंख्या भूमिहीन दिहाड़ी मजदूर थी।[16] ब्रिटिश सरकार ने अवध में निजी संपत्ति के पूंजीवादी संस्थान की शुरुआत की जिसने इस क्षेत्र के कृषि व्यवस्था को बदल दिया।[17] औपनिवेशिक सरकार ने अवध में सामंती व्यवस्था की शुरुआत की जो राजनीतिक शक्ति पर आधारित थी। इस व्यवस्था ने अवध में जमींदारों और भूमिहीनों के बीच वर्ग संघर्ष को जन्म दिया।[18]

---

[9] Rao, 2000: p. 1
[10] sigh, 2000: p. 92
[11] Bandhopadhyay, 2009: p 122
[12] Bandhopadhyay, 2009: pp. 158-169
[13] Roy, 2006: p. 135
[14] Bandhopadhyay, 2009: pp.191-205
[15] Chandra, 2009: pp. 184-187
[16] Pandey, 2010: p. 146
[17] Pandey, 1992: p. 29-49
[18] Sarkar, 2012: pp. 48-55

किसान आंदोलनों में कांग्रेस की भूमिका

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का गठन 1885 में हुआ था। गांधी जी ने 1915 भारत वापस आने के पश्चात् भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के संपर्क में आये। अगर देखा जाय तो गांधी जी से पहले, कांग्रेस में पहले नरमपंथियों का और बाद में उग्रवादियों का वर्चस्व था। गांधी जी ने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस को एक नई पहचान दी। भारत वापस आने के बाद भारतीय राजनीति में भाग लेना शुरू किया। उन्होंने सबसे पहले भारतीय जनता को राष्ट्रीय आंदोलन से जोड़ने का प्रयास किया। इसके साथ ही शुरुआत में चंपारण और खेड़ा आंदोलन में उनकी सक्रिय भागीदारी रही। गांधी जी किसान मुक्ति के पूर्ण समर्थक थे। उन्होंने 1916 में किसानों के बारे में कहा था कि 'हमारा उद्धार' केवल किसानों के द्वारा ही हो सकता है। 1921 में उन्होंने फिर कलकत्ता के व्यापारियों से कहा कि 'स्वराज किसानों पर निर्भर है। अगर वे मदद नहीं करते हैं तो स्वराज प्राप्ति नहीं की जा सकती है'।[19]

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के नेता राष्ट्रीय आंदोलन में भारतीय किसानों की सहायता प्राप्त करना चाहते थे। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस नीति में यह परिवर्तन उसी समय हुआ जब भारतीय किसानों के लिए उपनिवेशवाद के पूर्ण परिणाम सतह पर आ रहे थे। किसानों को राष्ट्रीय आंदोलन में लाने के लिए कांग्रेस ने दो तरीके अपनाए पहला, कांग्रेस ने किसानों को जाति प्रथा से बाहर निकालने की कोशिश की और दूसरा, किसानों में, भारत को अपना राष्ट्र महसूस कराने की कोशिश की।[20]

यहाँ ध्यान देने वाली बात यह भी है कि, इस दौरान होमरूल आंदोलन बहुत सक्रिय था, 1918 में किसान सभा का गठन किया गया था। गौरीशंकर मिश्रा, इंद्रनारायण दिवेदी और मदन मोहन मालवीय किसान सभा के प्रमुख नेता थे। 1919 के पश्चात् उत्तर प्रदेश में किसान सभा की 450 शाखाएँ बनाई गईं। 1918 में दिल्ली में हुए कांग्रेस अधिवेशन में अनेक किसानों ने भाग लिया। किसान सभा के कारण कई स्थानीय नेता जैसे झिंगुरी सिंह, दुर्गापाल सिंह और बाबा रामचंद्र आदि अस्तित्व में आए।

जून 1920 में, बाबा रामचंद्र ने नेहरू से गाँव में आने और किसानों की स्थिति देखने का अनुरोध किया। नेहरू ने अपनी आत्मकथा में इलाहाबाद में किसानों के साथ बैठक के बारे में लिखा है कि किसानों ने उन्हें तालुकदारों के उत्पीड़न के बारे में बताया। किसान जनवरी से मार्च 1921 के बीच मुख्य रूप से दक्षिण और दक्षिण पूर्व अवध जैसे राय–बरेली, प्रतापगढ़ और सुल्तानपुर में बाबा रामचंद्र के नेतृत्व में अधिक सक्रिय थे। किसानों द्वारा कई जमींदारों के घर और फसलें नष्ट कर दी गई। कई व्यापारियों को माल सस्ते दामों पर बेचने को मजबूर होना पड़ा। जब बाबा रामचंद्र को गिरफ्तार किया गया, तब 60000 किसान जेल के आसपास जमा थे और जब उन्होंने आश्वासन दिया कि अगले दिन बाबा रामचंद्र को रिहा किया जाएगा, तो किसानों ने अपनी हड़ताल छोड़ दी।[21] 1921 के दौरान किसान आंदोलन और असहयोग आंदोलन साथ–साथ चला। उसी समय ब्रिटिश सरकार द्वारा मालगुजारी अधिनियम पारित किया गया जिसने किसानों को कुछ आशा दी और इस तरह यह आंदोलन हाशिए पर चला गया, लेकिन यह अवध में किसान आंदोलनों का अंत नहीं था।[22]

गांधी जी और किसान आंदोलन

गांधी जी कांग्रेस के एक महत्वपूर्ण नेता थे इन्होंने अपने प्रारंभिक राजनीतिक जीवन में भारत में किसान आंदोलनों में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उन्हें जमीदारों द्वारा किसानों पर हो रहे शोषण के बारे में पता था। कांग्रेस अवध में जगह बनाने की कोशिश कर रही थी, गांधी जी ने अपने अहिंसा सिद्धांत को अवध के किसान आंदोलन में अपनाया। 1921 में जब वे अवध गए तो उन्होंने कई निर्देश जारी किए जैसे वे किसी का बुरा नहीं करेंगे, वे दुकानों को नहीं लूटेंगे। वे अपने विरोधियों को दया से प्रभावित करेंगे। गांधी जी ने कहा कि हम जमीदारों को अपना दोस्त बनाना चाहते हैं, दुश्मन नहीं। इस तरह गांधी जी अवध में अपने शांतिपूर्ण तरीकों का इस्तेमाल कर रहे थे।[23]

कांग्रेस के प्रति किसानों की प्रतिक्रिया

19वीं शताब्दी में, भारतीय स्वतंत्रता संग्राम का नेतृत्व कांग्रेस कर रही थी। किसान आंदोलन भी स्वतंत्रता संग्राम का हिस्सा थे। इसलिए कांग्रेस भी किसान आंदोलनों का नेतृत्व कर रही थी। कांग्रेस के मुख्य नेता गांधी थे जो इन किसान आंदोलनों का नेतृत्व कर रहे थे। भारत के विभिन्न हिस्सों में कई किसान आंदोलनों में गांधी के निर्देशों का पालन किया गया।[24] बाबा रामचंद्र, सहजानंद और मालवीय आदि जैसे कई नेताओं ने गांधी जी के बताये मार्ग पर खुद चले और अन्य किसानों को भी प्रेरित किया।

---

[19] Kumar, 1983: p. 16
[20] Chandra, 1976: pp. 14-15
[21] Chandra, 2011: pp. 174-178
[22] ibid
[23] Pandey, 2010: pp. 143-198
[24] Chandra, 2011: pp. 174-178

वे किसान सभा के सदस्य थे। लेकिन हरदोई, सीतापुर और बहराइच क्षेत्रों में किसानों ने कांग्रेस और गांधी की भूमिका को स्वीकार नहीं किया।[25] वे अपनी समस्याओं को किसी भी तरह हल करना चाहते थे लेकिन शांतिपूर्ण तरीके से किसान आंदोलनों की गांधीवादी अवधारणा में विश्वास नहीं करते थे। हालांकि, उन्होंने कहा कि गांधी उनके आंदोलन को हाशिए पर डाल देंगे। उन्होंने जमीदारों और औपनिवेशिक सरकार के खिलाफ हिंसा को अपनाया। कांग्रेस ने शुरुआती दौर में उनका साथ दिया लेकिन जब उन्होंने पाया कि एका आंदोलन का किसान अहिंसा के रास्ते पर नहीं चलेगा तो कांग्रेस ने वह आंदोलन छोड़ दिया।[26]

उपसंहार

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि, एका आंदोलन भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के एक घटक के रूप में जाना जाता है। इसे शुरु करने में जुझारू किसान नेता मदारी पासी की अहम भूमिका रही। आंदोलन का मुख्य मुद्दा स्वीकृत लगान से 50 प्रतिशत अधिक लगान वसूलना था। मदारी पासी को कांग्रेस और खिलाफत नेताओं के अनुशासित और अहिंसक आंदोलन के सिद्धांत में विश्वास नहीं था, इसलिए कुछ समय बाद यह आंदोलन अलग–थलग पड़ गया। इसके साथ ही अगर देखें तो पाते हैं कि, ब्रिटिश नीतियां राजाओं की तुलना में अधिक दमनकारी थीं क्योंकि उनका केवल एक ही उद्देश्य था, अधिक से अधिक लाभ प्राप्त करना। उन्होंने जमीदारी और रैयतवाड़ी व्यवस्था की स्थापना की जो किसानों के लिए अधिक दमनकारी थी। किसानों ने औपनिवेशिक सरकार का विरोध करना शुरू कर दिया और उन्होंने अलग–अलग नामों से कई किसान संगठन बनाए। किसान सभा भी उनमें से एक थी जिसने किसान आंदोलन में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। इसने अवध के विभिन्न हिस्सों जैसे प्रतापगढ़, रायबरेली, हरदोई, सीतापुर और यूपी के कई अन्य दक्षिण पूर्व जिलों के अन्तर्गत काम में भी योगदान दिया। कांग्रेस किसान सभा का नेतृत्व कर रही थी तथा नेहरू और गांधी मुख्य कांग्रेसी नेता थे, जिन्होंने इस आंदोलन का समर्थन किया था। किसानों ने गांधीवादी अहिंसा पद्धति से लड़ाई लड़ी। उन्होंने गांधीवादी सिद्धांतों का पालन किया। 1921 के बाद किसान सभा के तहत किसान आंदोलन को भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में मिला दिया गया क्योंकि औपनिवेशिक सरकार ने इस आंदोलन के बाद उनकी कुछ मांगों को पूरा किया था, किन्तु किसान आंदोलनों का यह एकमात्र चरण था जिसने कांग्रेस के नेतृत्व को स्वीकार किया। अतः आंदोलन के किसानों ने अहिंसा के गांधीवादी सिद्धांतों का पालन नहीं किया। वे अपनी समस्याओं को बलपूर्वक हल करना चाहते थे और इसका कारण यह हुआ कि, कांग्रेस ने खुद को इस आंदोलन से अलग कर लिया।

---

[25] Ibid
[26] Ibid